P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-XI*July-2016

ध्रुवपद का इतिहास एवं उसकी सम्भावनाएं

ओम प्रकाश नायर
सहायक आचार्य,
संगीत विभाग,
परिष्कार कालेज ग्लोबल एक्सिलेंस,
मानसरोवर, जयपुर,

सारांश

आज जब भारतीय शास्त्रीय–संगीत में अनेक प्रयोग हो रहे है साथ ही आज की युवा पीढ़ी प्रयोगों के नाम पर विभिन्न फ्यूजन एवं पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित हो रही है इस शोधलेख के माध्यम से मेरा अग्रिम पीढ़ी को यह सन्देश होगा कि ध्रुवपद–धमार को विशुद्ध एवं घोर परम्परावादी न मानते हुए उसमें सम्भावनाओं के खुले आकाश के मार्ग को बन्द ना करें।

मुख्य शब्द : ध्रुवपद का विकास, ध्रुवपद में सृजनात्मकता, ध्रुवपद एव नवाचार

प्रस्तावना

ध्रुवपद का इतिहास

ध्रुवपद–गायन–शैली शास्त्रीय संगीत की वर्तमान प्रचलित सबसे प्राचीनतम् शैली है साथ ही शास्त्रीय का मूल आधार भी माना जाता है क्योंकि इसी शैली में हजारों वर्षों पूर्व वैदिक कालीन संगीत का प्रभाव सर्वत्र दिखाई देता है। ध्रुवपद–गायन के प्रचार से पूर्व भारतीय संगीत में प्रबन्ध, वस्तु एवं रूपक आदि गीत–शैलियों का प्रचार था। वैदिक मंत्र, छंद, वृत्त, गीत, माठा, ध्रुवा, प्रबंध एवं ध्रुवपद इस तरह अनेक गान–विधाएं प्रचार में सुनी एवं गायी जाती थी और प्रबंध–गायन से पूर्व ध्रुवागीतों का प्रचलन भरत के **'नाट्यशास्त्र'** में भी प्राप्त होता है। **''नाट्य शास्त्र के काल–खण्ड में नाट्यगीतों में 'ध्रुवा गीतों' का स्थान प्रमुखतम् था। उसमें प्राप्त होने वाले विवरण के आधार पर प्रतीत होता है कि मध्यकाल से आज तक उपलब्ध 'ध्रुवपद' का विकास इन्हीं 'ध्रुवा गीतों' से हुआ है। इस गीत शैली को 'ध्रुपद' अथवा ध्रुवपद के नाम से अभिहित किया जाता है।''**[1]

भारतीय शास्त्रीय संगीत के इतिहास पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो संगीत के विकास में मध्यकाल और आधुनिक काल को महत्वपूर्ण समय माना जाता है। शास्त्रीय संगीत के सनातन एवं आध्यात्मिक स्वरूप की उन्नति इसी काल के भक्त–कवियों और कीर्तनकारों के द्वारा की गई इसलिए मध्यकाल को संगीत के स्वर्णयुग की संज्ञा भी दी गई। मध्य युग में हवेली–संगीत का प्रादुर्भाव हुआ, जिसका श्रेय पुष्टिमार्गीय अष्टछाप कवियों को दिया जाता है। इन्होंने राधाकृष्ण की अष्टप्रहर की भक्ति की धारा को कीर्तनों के रूप में प्रवाहित किया और यहीं से ध्रुवपद–धमार–शैली का सृजन माना जाता है। प्रबन्ध–शैली के शास्त्रीय नियमों को हवेली–संगीत के कीर्तनों में समावेश कर इस शैली की बुनियाद रखी गई। शास्त्रीय संगीत की रीढ़ मानी जाने वाली एवं विशुद्ध कहलाए जाने वाली ध्रुवपद–धमार–शैली का सृजन मन्दिरों में गाये जाने वाले हवेली–संगीत से हुआ, जिसका प्रमाण आज भी राजस्थान के श्री नाथद्वारा और मथुरा के द्वारिकाधीश, जैसे मन्दिरों के संगीत में सुनाई देता है, जिसमें वर्तमान में गाये जाने वाले **अल्हैया बिलावल** राग में ध्रुवपद **''आज को श्रृंगार सुभग, सांवरे गोपाल जूं को''** जैसे पद हवेली–संगीत की ही देन है इसलिए ध्रुवपद के अस्तित्व में आज भी हवेली–संगीत की गूंज सुनाई देती है।

हालाकिं कुछ संगीतज्ञ 15वीं शताब्दी में **मानसिंह तौमर** के दरबार से ध्रुवपद–शैली का जन्म मानते है परंतु इस शैली की नीव तो प्राचीन–गीत–शैलियों से मानी जाती है। **''शारंगदेव के ग्रंथ 'संगीत रत्नाकर' में 'ध्रुवा' नामक एक प्रबंध का वर्णन किया गया है जिसमें पद का अर्थ प्रबंध में प्रयुक्त भाषा भाग है। 'ध्रुव' नामक प्रबंध में प्रयुक्त 'पद' अर्थात सार्थक शब्द ही ध्रुवपद, 'एला' इत्यादि। प्रबंध में 'ध्रुव' नामक धातु में प्रयुक्त पद को 'ध्रुवपद' कहा जा सकता है''।**[2]

वास्तव में ध्रुवपद स्वयं में ही नवाचार है क्योंकि उस समय जब अनेक शैलियां संगीत–जगत् को सुशोभित कर रही थी, उसके बीच में से नवीन कल्पना के रूप में **'ध्रुवपद'** का जन्म हुआ। 15वीं शताब्दी में **मानसिंह तौमर** के दरबार से इस शैली का आरम्भ हुआ। **''कैप्टन विलर्ड'' के अनुसार ध्रुपद का आरम्भ राजा मानसिंह के समय से मानते है जिसको ध्रुपद गायकों का पिता कहा गया है।''**[3]

उद्देश्य

हमारा भारतीय संगीत बहुत समृद्ध है एवं उसमें अनन्त सम्भावनाएँ हैं अतएव मेरा **उद्देश्य** शोधलेख के माध्यम से ध्रुवपद जैसी धीर–गम्भीर गायन–शैली में आ रही जड़ता के विपरीत एक जीवन्तता का आग्रह होगा।

ध्रुवपद में सृजनात्मकता

देखा जाए तो ध्रुवपद और नवाचार यह देखने में बेमेल शब्द प्रतीत होते है क्योंकि विशुद्ध कहीं जाने वाली इस गायकी में प्रयोग सम्भव नहीं प्रतीत होता है और घरानेदार घोर परम्परावादी भी इस शैली में परिवर्तन करना ध्रुवपद को खण्डित करने के समान मानते है किन्तु कला तो सदैव परिवर्तनशील है। आज के और पुराने संगीत की तुलना में **आवाज़–लगाव, भाव, विषय–वस्तु रागदारी, साहित्य** एवं **प्रस्तुतिकरण** आदि में परिवर्तन दिखाई देता है।

प्राचीन समय से आज तक ध्रुवपद–गायन–शैली का प्रस्तुतिकरण उपज–अंग माना जाता है जिसे **नवाचार** का उत्कृष्टम् नमूना माना जाता है। इस गायन में केवल बन्दिश के अतिरिक्त अन्य सभी अंग **उपज–अंग** के आधार पर ध्रुवपद–साधक **'कलावन्त'** यानि प्राचीन समय में अभिहित इसको प्रस्तुत करते हैं। जिसके अंतर्गत प्राचीन समय में ध्रुवपद के आरम्भिक आलाप जो ईश्वरसम्बोधक शब्दों से युक्त श्लोक **''हरि ऊँ अनन्त, नारायण, तरण तारण त्वम्, अनन्त हरि ऊँ''** से किया जाता था, जिसे विलम्बित, मध्य एवं द्रुतलय में तीनों सप्तकों में गाया जाना कठिन हो जाता था, परिणाम स्वरूप **नोम–तोम्** के आलाप प्रारम्भ हुए जो कि नवाचार का ही रूप था, जिसमें **रि, ररन** एवं **तननन** इत्यादि निरर्थक बोलो का प्रयोग शुरू हुआ जो वर्तमान में भी प्रचलित है। इसके पश्चात् दूसरे चरण में **पद्य–रचना** गायी जाती है, जिसमें चारों चरण स्थाई, अन्तरा, संचारी एवं आभोग को भली–भांति गाने के पश्चात्, उसमें उपज–अंग द्वारा बोल–बांट एवं लय–बांट के साथ बढ़त की जाती है, जिसमें बहलाव–अंग, बोल–आलाप, बोलबांट, लयबांट को (दुगुन, तिगुन, चौगुन, छःगुन, आड़, कुबाड़ एवं बिआड़) जैसी क्लिष्ट, चमत्कारिक एवं अद्भुत लयों के समावेश से गाया जाता था। ध्रुवपद का मुख्य अंग श्रुति, गमक, मीड़, कण एवं आन्दोलन होता है, जिसके प्रयोग से संगीत–मर्मज्ञ इसे सौन्दर्यात्मक, रसात्मक एवं भावात्मक गायन–वादन की प्रस्तुति बनाया करते हैं जो कि **नवाचार** का ही रूप था। संगीत में चाहे कोई भी विधा हो उसमें परिवर्तन तो हुए ही हैं। **'स्वर्गीय पण्डित रविशंकर'** ने अपने समय में अनेक प्रयोग किये। यदी वे ये परिवर्तन नही करते तो आज हमारे संगीत में **"नट भैरव"** जैसी रागों का अस्तित्व नही होता। **तानसेन** के पद **"जय शारदे भवानी"बैजू** के पद **"तेरो मन में कितनो गुण"** एवं **स्वामी हरिदास** के पद **"राधे आये मेघ"** महत्वपूर्ण रचनाएं अस्तित्व में नही होती। इन्होने अपनी रचनाधर्मिता एवं सृजनशीलता के माध्यम से अनेक ध्रुवपद नही रचे होते तो ध्रुवपद–धमार का भण्डार खाली होता।

ध्रुवपद एवं नवाचार

'नवाचार' का तात्पर्य देखें तो उसकी संधि है– नव़अच्अर यहां आचरण का तात्पर्य है– व्यवहार व आचरण करना, अर्थात् किसी क्षेत्र या विधा में वह कार्य प्रस्तुत करना है, जो मूल में परिवर्तन के साथ नये आचरण के रूप में प्रस्तुत होता हो।

ध्रुवपद और नवाचार यह देखने में बेमेल शब्द प्रतीत होते हैं क्योंकि विशुद्ध कहीं जाने वाली इस गायकी में प्रयोग सम्भव नहीं प्रतीत होते हैं किन्तु कला सदैव परिवर्तनशील हैं। आज के और पुराने संगीत की तुलना में आवाज़–लगाव, भाव, विषय–वस्तु एवं रागदारी आदि में बहुत विस्तार एवं परिवर्तन दिखाई देता है, अतएव हर युग में सृजनशील एवं रचनाधर्मी संगीतकार परम्परावादी होते हुए भी लीक से हटकर नवसृजन करते आये हैं, जिसके कारण हमारे संगीत–विषय में रोचकता, आकर्षण एवं नयी रवानगी पैदा हुई क्योंकि सृजन एक सतत् प्रवाहमान जलधारा के समान होते है, जो निरन्तर बहाव के कारण कला को जीवन्तता प्रदान करता है। परम्पराओं का अर्थ रूढ़िवादी होना नहीं है बल्कि परम्परा तो नवसृजन है, जिसके आधार पर ही परम्पराएं घरानों का रूप लेकर पैदा हुईं, जिन्होंने नित नया सृजन सदैव सामने रखा और अपनी निजी पहचान के कारण ही घरानों के रूप में समक्ष हुई। ध्रुवपद के इस मर्म को कुछ संगीत–गायकों, मर्मज्ञों, ध्रुवपद–साधकों, संगीतकार एवं वाग्गेयकारों ने समझा, जिसमें आधुनिक काल में **पण्डित ओम्कार नाथ ठाकुर** एवं मेरे गुरूद्वय **पण्डित लक्ष्मण भट्ट तैलंग** और **डॉ. मधु भट्ट तैलंग, पण्डित विदुर मलिक, पण्डित अभयनारायण मलिक, पण्डित प्रेम–रामकुमार मलिक, गुन्देचा ब्रदर्स, प्रो. ऋत्विक सन्याल, उ. एच.एस. डागर एवं वसिफुद्दीन डागर** आदि चुनिन्दा नाम ही दिखाई देते हैं, जिन्होंने ध्रुवपद में रचना–धर्मिता को अपनाया, साथ ही उन्हें मंचों पर प्रस्तुत किया और करवाया भी। वर्तमान समय में इन संगीत–गुणीजनों ने ध्रुवपद में नवीनता एवं परिवर्तन कर उसे जीवन्त करने का मार्ग प्रशस्त किया। ये नवाचार इस प्रकार है

1. ध्रुवपद में एकल रूप के अलावा युगल एवं सामूहिक (वृन्दगान) रूप का समावेश ।
2. ध्रुवपद में प्रयुक्त रचनाकारों से इतर कवियों की रचनाएं–यथा–कबीर, रसखान, उत्तम कवि, मीरा, नानक, रवीन्द्रनाथ टैगोर, निराला, स्वामी विवेकानन्द, घनानन्द, बुल्लेशाह एवं संजीव मिश्र आदि
3. ध्रुवपद में इतर भाषा (बंगाली, पंजाबी, मारवाड़ी एवं खड़ी बोली (हिन्दी) आदि के समावेश) एवं साहित्य का प्रयोग–
4. नव निर्मित रागों में ध्रुवपद–धमार यथा–जोगश्री, जोगेश्वरी, हरिकौंस, हेमनन्दिनी, औडुव कल्याण, केदार कल्याण, मधुमास, गुणीदुर्गा,अद्भुत कल्याण मेवाड़ा दरबारी एवं धन्यभारत आदि।
5. रागों में अप्राप्त ध्रुवपदों की पुनर्सर्जना यथा–रेवा, मीरा की मल्हार, मालगुन्जी हंसकिंकिणी, धानी, चक्रधर एवं अन्य रागों में रचनायें।
6. ध्रुवपद की विषयवस्तु से इतर आधुनिक विषयों (प्राकृतिक आपदाओं एवं समाज से जुड़ी समस्याओं)पर ध्रुवपद।
7. अधुना प्रचलित गीतों एवं पदों का ध्रुवपद में तिरोभाव–यथा रघुपति राघव राजाराम, वन्दे

मातरम्, सारे जहाँ से अच्छा एवं जन प्रचलित आरतियाँ आदि को ध्रुवपद में परिर्वतित किया।

8. अधुना प्रचलित एवं अप्रचलित रागों एवं तालों में ध्रुवपद, रागमालाएं, राग–सागर एवं तालमालाएं आदिरचनायें।
9. समान शब्द–स्वर युक्त रचनाएं एवं खेल–खेल में ध्रुवपद की कठिन शब्द–स्वर–लय साधना हेतु निर्मित अद्भुत रचनाएं।
10. ध्रुवपद का 'पचरंगी' फ्यूजन 'पंचरंग' एवं राजस्थानी मॉड का समावेश।
11. ध्रुवपद का नाटकों, दूरदर्शन–धारावाहिकों (लाईफ ओके चेनल पर 'देवों के देव महादेव') एवं पार्श्व संगीत में समावेश हुआ।
12. ध्रुवपद एवं वाद्यों में जुगलबन्दी एवं तिगुलबन्दी यथा–ध्रुवपद–सुरबहार,ध्रुवपद–वॉयलिन, ध्रुवपद–सन्तूर, ध्रुवपद–मोहन वीणा, ध्रुवपद–सरोद, ध्रुवपद–सितार, ध्रुवपद–चेलो आदि के साथ।
13. ध्रुवपद और कत्थक नृत्य का संगम।
14. नव निर्मित वाद्यों का (चन्द्रवीणा) मोहन वीणा ध्रुवपद–धमार में समावेश ।
15. ध्रुवपद–योग का सम्मिश्रण।
16. ध्रुवपद में पाश्चात्य वाद्यों का समावेश–सैक्सोफोन, हारमोनियम, चैलो या सैलो, सरोद, गिटार आदि।
17. आवाज़–लगाव में अन्य शैलियों का मिश्रण यथा तान, खटके, ख्यालनुमा स्निग्ध वाणी का प्रयोग।

निष्कर्ष

सृजनधर्मी संगीतकार मन के भावों एवं मर्म को समझते हैं एवं उसे मूर्तरूप प्रदान करते हैं तथा मनुष्य के विचारों में निहित नित–नवीनता एवं नूतन के प्रति सहज आकर्षण से ही यह सम्भव हो सकता है और वो ही संगीत प्रकृति एवं मनुष्य के सबसे करीब रहता है। ध्रुवपद में परम्परागत नियम और बन्धन है और ये नियम उसके भावात्मक एवं उसके कलात्मक रूप में सहायक होने चाहिये न कि उसमें बाधक बनें। ये नियम ध्रुवपद को स्वस्थ और सम्पुष्ट बनाने में सहायता होते हैं। कलाकार को कभी–कभी संगीत में कुछ नवीनता लाने के लिए नित नवीन कार्य करने चाहिये, साथ ही वाग्गेयकारों को पूरी छूट होनी चाहिये, तभी ध्रुवपद आगे बढ़ेगा। एक स्थान पर ठहरा हुआ पानी तो सड़ता ही है और वो केवल दुर्गन्ध ही देता है जबकि संगीत तो नदी की तरह सतत् बहता रहना चाहिये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ध्रुवपद संगीत अंक, जनवरी–फरवारी, 1964, पृ. 157
2. श्रीमती सुमित्रा आनन्दपाल सिंह, ध्रुवपद गायकों और ध्रुवपदकारों के आश्रयदाता, ध्रुपद धमाार अंक, संगीत जनवरी–फरवरी 1964
3. Captain willard "A treatise on music of hindustan, P.88